शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

- डॉ० मंजू मिश्रा

मनुष्यता के समर्थन में सच्ची अवधारणा वह होती है जो एक सच्चे हृदय में स्पंदित होती है। मानवाधिकार की संकल्पना मनुष्यमात्र के हितार्थ एक विधिसम्मत अवथारणा है। निराला जैसे एक सृजनशील रचनाकार की व्यक्तिगत एवं रचनागत आधार पर निर्मित अवधारणा की परीक्षा मानवाधिकार के आलोक में की गयी है। जिसके आधार पर यह निष्पत्ति हो सके कि मानवाधिकार की अवधारणा न केवल विधिसम्मत है अपितु मानवमात्र के हितार्थ मनीषासम्मत भी। प्रस्तुत लेख में इसी मंतव्य से निराला साहित्य को परखने का प्रयत्न है।

विषय संकेतः- *मानवाधिकार, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, संविधान और साहित्य*

मानवाधिकार मानव अस्मिता का कवच, विश्व-शांति एवं कल्याण का मंत्र है। यह मानवता रूपी वृक्ष का खाद और पानी है। मानवाधिकार को स्वयं जगत् नियंता परमात्मा ने सूर्यदेव की प्रखर किरणों को लेकर मानव प्रकृति की पुस्तक में ऐसे शब्दों में लिखा है, जिसको कोई मिटा नही सकता अर्थात् मानवाधिकार वे अधिकार है। जो मानव होने के नाते प्रत्येक मानव को बिना किसी भेदभाव के जन्मना ही प्राप्त होते हैं। अत: इसे मूल अधिकार, अन्तर्निहित अधिकार, प्राकृतिक अधिकार, आधारभूत अधिकार व जन्म अधिकार भी कहा जाता है। स्वाभाविक प्रकृति की दृष्टि से मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है। ये अधिकार व्यक्तियों के उपभोग के साधन हैं।[1] मानवाधिकार अधिरचित विधि को मार्ग निर्देशित करने का मापदण्ड है।[2]

यद्यपि 'मानवाधिकार' शब्द आधुनिक युग की देन माना जाता है, तथापि मानवाधिकार का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी की मानव-सभ्यता।[3] बीसवीं सदी के नवीन मानवाधिकार शब्द को पूर्व में प्रचलित नैसर्गिक अधिकार या व्यक्ति के अधिकारों से लिया गया है।[4] मानवाधिकार के बारे में व्यवस्थित रूप से सोचने और उन्हें संगठित रूप देने का पहला अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास 25 सितम्बर सन् 1926 को दासता के विरुद्ध हुए विश्व सम्मेलन के रूप में सामने आया। लगभग 4 वर्ष बाद 28 जून सन् 1930 को बलात् श्रम पर सम्मेलन हुआ। 18 वर्ष के दीर्घ अंतराल के बाद मानवाधिकार की पहली सुव्यवस्थित घोषणा 10 दिसम्बर 1948 को सामने आई। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा की गई यह घोषणा 'मानव अधिकारों' की 'विश्व सार्वभौमिक घोषणा' कहलाती है। संवैधानिक रूप में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 (1994 की संख्या-10) की धारा 2घ के अनुसार-मानवाधिकार से अभिप्राय संविधान द्वारा प्रत्याभूत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारत के न्यायालयों में प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा से है।[5]

संविधान में केवल अधिकारों की घोषणा मात्र का कोई महत्त्व नहीं होता जब तक कि उनकी सुरक्षा संस्था के लिए भी उपबन्ध न किए जाए। भारतीय संविधान के संदर्भ में व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 में उल्लिखित हैं। समता का अधिकार: अनु0 14, 15, 16, 17 व 18 में, स्वतंत्रता का अधिकार: अनु0 19, धर्म स्वतंत्रता का अधिकार अनु0 25, 26, 27 व 28 ऊपर उल्लिखित है। शोषण के विरुद्ध अधिकार: अनु0 23, 24 संस्कृति व शिक्षा सम्बन्धी अधिकार: अनु0 29, 30, संवैधानिक उपचारों के अधिकार: अनु0 32 में उल्लिखित है। महिला, बालक, नि:शक्त, वृद्ध, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति, पिछड़ेवर्गों, और अल्पसंख्यक वर्गों की प्रबलता से ही समतामूलक समाज की स्थापना सम्भव है। अत: भारतीय संविधान में इनके लिए भी अलग से कतिपय उपबंधों का उल्लेख किया गया है।

स्पष्ट है कि मानवाधिकार की बात भारत में नयी नहीं है। मानवाधिकार के उद्भव का इतिहास सौहार्द, समभाव, सहयोग और समता के मापदण्डों पर आधारित है। भारतीय संस्कृति इन सिद्धांतों से ओत-प्रोत रही है। महाप्राण निराला संस्कृति के कवि के रूप में ही सर्वाधिक सफल हुए हैं। उनके काव्य में निहित शक्ति, ओज, औदार्य, अध्यात्म, राष्ट्रीयता, मंगलाशा आदि का मूलाधार है- उनकी प्रबल सांस्कृतिक चेतना। सांस्कृतिक कवि

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

सुरूचि और परिष्कृत प्रवृत्तियों का धनी है। यही कारण है कि उसके काव्य में उदात्त स्वर सदा मुखरित रहता है। मानवता ही उनके साहित्य की भीत्ति है। उच्चतर मानवीय मूल्यों की सुंदर और विशद प्रतिस्थापना इनके साहित्य में स्पष्टत: परिलक्षित होती है। करूणा, मैत्री और विश्व-बन्धुत्व के साथ ही युद्ध और भोगवाद का विरोध तथा पाशविकता से मुक्ति का आह्वान निराला साहित्य की प्रमुख विशेषता है। अत: आवश्यकता है निराला साहित्य को भारतीय संस्कृति के व्यापक धरातल पर प्रस्तुत कर मानवाधिकार के आलोक में मूल्यांकित करना। समता के अधिकार के अनुसार 'समाज में धर्म, जाति, भाषा, सम्पत्ति, वर्ग या लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव नही किया जाना चाहिए। इस आधार पर निराला साहित्य का मंथन करने पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि 'सर्वभूत मैत्री ही निराला जी का सहज धर्म रहा है। कवि ने विवेकानंद के समान ही मनुष्य को सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी स्वीकार किया है।[6] कविवर निराला मानवता के सच्चे पुजारी थे। उनका चिन्तन देशकाल की भिन्नता का विचार न कर सम्पूर्ण मानवता का हितैषी बन गया है और समष्टि की मंगल-कामना हेतु व्यक्ति-व्यक्ति को मानव की पारस्परिक अभिन्नता का नया बोध दे रहा है -

"मानव-मानव से नही भिन्न, निश्चय हो श्वेत कृष्ण अथवा/वह नहीं क्लिन्न।।"[7]

कवि, मानव समानता का आकांक्षी है और इसी कारण उनकी सम्मति में "किसी एक के प्रति प्रतिकार और किसी दूसरे के प्रति प्यार, क्षुद्र सीमा-धर्म हो सकता है, महान् मानव-धर्म नहीं।"[8] उनका दृढ़ विश्वास है, "व्यक्ति-व्यक्ति में परस्पर भेद के कारण दानवता का अंधकार ही बढ़ा"[9] इसके विपरीत आन्तरिक भावों की एकता वर्ण, जाति, रूप और धर्म से परस्पर भिन्न होते हुए भी मानव-मानव को मिलाने वाली होती है -

"दोनों हम भिन्न वर्ण, भिन्न जाति, भिन्न रूप,
भिन्न धर्म भाव पर केवल 'अपनाव' से प्राणों से एक थे।"[10]

निराला जी वेदांती चेतना के कवि हैं। अत: उन्होंने सर्वत्र मानव-मानव के अभेद का संदेश दिया है। कवि की सम्पूर्ण चिन्तन का मूल "आत्मवत् सर्वभूतेषु" की पवित्र भावना है। उनका समतावादी मानवतावाद, अन्त: विश्वास, प्रेम, दया, त्याग, परोपकार, श्रद्धा एवं अन्य नैतिक मूल्ययुक्त भावों द्वारा प्राणिमात्र के कल्याणार्थ उदात्त भूमि पर टिका है।

महाप्राण मानव मात्र को पंथ, वर्ण-जाति, लिंग आदि के संकुचित घेरे से बाहर निकालकर समानता की आकांक्षा करते हैं-

"दूर हो अभिमान, संशय/वर्ण-आश्रम-गत महामय
जाति-जीवन हो निरामय/वह सदाशयता प्रखर दो।"[11]

मानवता के पोषक कवि निराला समस्त मानव के हृदय में उदात्त भावों की सुगन्ध पाते हैं। उनका अभिमत है कि मानव के बाह्य रूप-रंग को देखकर जो भेद-भाव करता है, वह सच्चा गुण-परखी नहीं है।[12] कविकृत 'देवी', 'चतुरी-चमार', 'बिल्लेसुर बकरिहा' और 'कुल्ली भाट' आदि व्यक्ति-प्रधान रेखाचित्र उनकी इसी धारणा के उद्घोषक हैं। सच तो यह है कि महाप्राण मानव निर्मित कृत्रिम भेदों को मानवता के वास्तविक उन्नयन में कोई स्थान नहीं देते।" समाज का सर्वोत्तम बाह्य निष्कर्ष इस समय राजनीतिक संगठन है, जहाँ मनुष्य-मनुष्य के ही वेश में उतरता, समय और मनुष्यता के साथ पूर्णरूपेण मिल जाता है। इस प्रकार के देशव्यापी बल्कि विषद् भावना द्वारा विश्व-व्यापी मनुष्य आगे चलकर आप ही अपनी, जाति का सृजन करेंगे जहाँ ब्राह्मण सज्जन और वैश्य सज्जन की एकता में फर्क न होगा। ब्राह्मण और वैश्य केवल कर्म के ही निर्णायक होंगे, पद उच्चता के नहीं। उस स्वतंत्र भारत में इस वर्ण-व्यवस्था से केवल परिचय ही प्राप्त होगा, उच्च नीच का निर्णय नहीं।"[13] उन्होंने लिखा है कि देश में मंगलमय वातावरण बनाये रखने हेतु गिरे हुए जनों को सहारा देकर उठाना होगा, छल-छद्म को नष्ट करना होगा -

"प्रति जन को करो सफल -
जीवन से भरो सकल-मनुजोचित उठे भाल
छल का छुट जाये जाल, देश मनाए मंगल।।"[14]

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

निराला जी की रचनाएँ पूर्णत: मानवीय भूमि पर प्रतिष्ठित हैं। वे पग-पग पर समाज में सभी मनुष्यों के प्रति समान व्यवहार करने की बात करते हैं। इनमें मानवाधिकार की रक्षा की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

अस्पृश्यता-की कुप्रथा को दूर करने के लिए ही निराला जी 'हृदय में प्रेम की पवित्रता' पर बल देते हैं। उनका विचार है कि सब मानव एक है। (जातिगत एवं धर्मगत भिन्नता कोई भी विभिन्नता नहीं है, "सत्य या ईश्वर ही वह रंग है, जो रस के रूप में कृतिकार की आत्मा के भावों की तरंग को पाठक की आत्मा से मिला देता है। अनेक प्राणों में एक ही प्रकार की सहानुभूति, एक ही मधुर राग बज उठता है ..... इन पंक्तियों में सत्य का जो सूत्र है, उससे भारत और इंग्लैण्ड बँधा हुआ है। दोनों आत्माएँ एक हैं, जातिगत कोई भी वैषम्य वहाँ नहीं।"[15]

निराला ने अपनी रचनाओं में समाज का जो चित्र उकेरा है वह मानवाधिकार की रक्षा के लिए ही है जिसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि वर्ण-धर्म-जाति के आधार पर कोई भेद-भाव न किया जाय। उनका अभिमत है "अधिकार भोग पर मनुष्य मात्र का बराबर का दावा है जो यह समझता है, हम बड़े हैं, हम छोटे न होंगे, उसे मनुष्य कहलाने में बड़ी देर है। जो यह समझता है बड़ा, छोटा और छोटा, बड़ा हो सकता है उसे यह मानने में भी कोई आपत्ति न होगी कि शूद्र भी कर्मानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य बन सकते हैं।"[16] इसीलिए साहित्यकार ने स्वयं पतुरिया के लड़कों के हाथ से पानी पीकर जातिगत रूढ़ि को तोड़ा है।17 वह जाति के प्रतीक जनेऊ की निस्सारता को व्यक्त करते हुए कहते हैं, "तोड़कर फेंक दीजिए जनेऊ, जिसकी आज कोई उपयोगिता नहीं जो बड़प्पन का भ्रम पैदा करता है और समस्वर से कहिए कि आप उतनी ही मर्यादा रखते हैं जितना आपका नीच से नीच पड़ोसी, चमार या भंगी रखता है तभी आप महामनुष्य है।"[18] दो जातियों में फैले हुए खान-पान और छुआ-छूत के संकीर्ण बंधनों को तोड़ने के उद्देश्य से ही वे "बाम्हन की पकायी पकौड़ी" छोड़कर किसी दूसरी जाति द्वारा तैयार की गयी तेल की पकौड़ी स्वीकार करते हैं।"[19]

निराला चिन्तन की विशिष्टता है- व्यक्ति स्वातंत्र्य की रक्षा। वे विवाह के सम्बन्ध में भी स्वतंत्रता के पक्षधर रहे हैं। प्राचीन काल में नारियों को जीवन-साथी चुनने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु कुछ समय बाद विवाह में माता-पिता की सम्मति परमावश्यक हो गई। लेकिन निराला की 'पद्मा और लिली' कहानी की पात्र पद्मा के निम्न कथन से स्पष्ट है कि साहित्यकार स्वतंत्रता के अधिकार के अन्तर्गत स्वेच्छानुसार जीवन-साथी वरण करने का पक्षधर है। पद्मा राजेन से प्रेम करती है और उसी से विवाह करना चाहती है किन्तु जब उसके पिताजी उसको इस विवाह से यह कह कर रोकते हैं, "तुम्हें नही मालूम? ब्राह्मण कुल की कन्या हो, वह क्षत्रिय-घराने का लड़का है-ऐसा विवाह नहीं हो सकता"[20] पद्मा आजीवन कौमार्यव्रत धारण करके विवाह को निजी विषय सिद्ध कर देती है और यह भी स्पष्ट कर देती है कि मात्र पुरुष के लिए ही नहीं बल्कि नारी के लिए भी विवाह ऐच्छिक विषय होना चाहिए। 'निरूपमा' के नीरू के कथन से भी यही बात स्पष्ट होती है।[21]

धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन कर निराला ने धार्मिक स्वतंत्रता पर भी बल दिया है जो बिल्लेसुर बकरिहा[22], अलका[23] और अन्य रचनाओं में सहज ही दिख जाता है। निराला का 'स्वतंत्रता' के अधिकार का दृष्टिकोण व्यापक था। उन्होंने दलित भारत की 'विधवा'[24] की दयनीय दशा का चित्रण कर इस बात पर बल दिया कि समाज में उसे भी स्वेच्छानुसार जीने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

जगत में अनेक धर्मों के मानने वाले जन हैं, किन्तु उन सभी धर्मों के मूल में एक ही तत्व विद्यमान है-'मानवता'। "कोई भी अच्छा काम करना धर्म है उसको करने पर मन को सच्ची शांति प्राप्त होती है। तुम किसी भूखे को भोजन करा दो तो वह भी धर्म होगा और तुम्हारे मन को शांति प्रतीत होगी।"[25]

शोषण के विरुद्ध अधिकार मानव के दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार के अन्य बलात् श्रम को रोकता है। भारतीय समाज में जमींदार, पूँजीपति, राजा, नबाब या अन्य शक्तिशाली या समृद्ध लोग कमजोर तथा गरीबों से बेगार कराते थे और उन्हें मजदूरी भी नहीं देते थे। शोषकों और शोषितों का यथार्थ चित्रण कर क्रांतिकारी निराला ने 'शोषण के विरुद्ध अधिकार' को बढ़ावा दिया है।

कवि निराला की दृष्टि में एक ओर पत्थर तोड़ती हुई नारी है, दूसरी ओर है, "तरूमालिका, अट्टालिका, प्रासाद" परन्तु कवि स्पष्ट शब्दों में कहता है -

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

"देख मुझे उस दृष्टि से/जो मार खा रोई नहीं।"

कैसी बेवश है, बेचारी मजदूरनी निराला ने मात्र 'मार खा रोई नहीं' से समस्त शोषितों की करूण वेदना को उजागर कर शोषण के विरुद्ध अधिकार पर बल दिया है।

निराला आजीवन समाज के साथ चले और यही पथ उनके साहित्य का अभीष्ट पथ बन गया। शोषित-पीड़ित और उपेक्षित जनों से उनका गहरा लगाव था। उन शोषित जनों को ऊपर उठाने की अपराजेय आकांक्षा तथा राष्ट्र को स्वतंत्र कराने की उत्कृष्ट लालसा से प्रेरित होकर उन्होंने अपने युग को विद्रोह की वाणी दी। पूँजीपतियों के निरन्तर शोषण के फलस्वरूप ही शोषित वर्ग दु:ख, स्वार्थ और छल-छद्मों का शिकार हो गया शोषकों की शोषण यातना का हृदय विदारक चित्र वहाँ और भी मार्मिक हो जाता है जब यह समृद्ध वर्ग बन्दरों को तो पूए खिलाता है और नर कंकाल की ओर देखने को उसके पास अवकाश ही नहीं रहता।[26] आर्थिक शक्ति का नियंत्रण थोड़े से धनी व्यक्तियों के हाथ में आ जाने के कारण भारत में आर्थिक असमानता दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। विभाजन और वितरण के प्रति क्षोभ भरा स्वर निराला साहित्य में भरा पड़ा है। अंग्रेजों के अत्याचार, पूँजीवादी शोषण की आलोचना, अकाल पीड़ित देश की भयावह दशा का चित्रण, स्वार्थी जमींदार के स्वरूप और कुकृत्यों का यथार्थ चित्रण[27] मूल अधिकारों के हनन को ही व्यक्त करता है।

संस्कृति एवं शिक्षा सम्बन्धी अधिकार में हर व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है। शिक्षा मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और मानवाधिकार तथा मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान की भावना को प्रबल बनाने की ओर अभिमुख होती है। यह सभी राष्ट्रों या धार्मिक समूहों के बीच आपसी सद्भाव, सहिष्णुता और मित्रता का अविर्द्धन करेगी और संयुक्त राष्ट्रसंघ की शान्ति की रक्षा के प्रयत्नों में सहायक होगी। सच है कि मानव-जीवन में शिक्षा सर्वप्रमुख है। "शिक्षा में शब्द-विद्या का स्थान और उच्च है। यही विद्या ज्ञान की धात्री कहलाती है। जितने प्रकार के दैन्य हैं, जितनी कमजोरियाँ है, उन सबका शिक्षा द्वारा ही नाश हो सकता है।"[28] इसीलिए साहित्यकार ने युवकों को बार-बार सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर, कृषकों में जाकर शिक्षा का प्रचार करने के लिए प्रोत्साहित किया है। कवि ने शिक्षा को जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि स्वीकार किया है, "संसार में जितने प्रकार की प्राप्तियाँ है।, शिक्षा उन सबसे बढ़कर है।"[29] 'अलका' उपन्यास के स्नेह शंकर में एक आर्दश पुरूष मूर्तिमान हो उठा है। वह सच्चे अर्थों में शिक्षित है। उसका बाह्य स्वरूप यथा संस्कार और प्रौढ़ता से सम्पन्न है, अन्तर ज्ञान राशि का संचित कोष है।[30] 'अलका' का विजय भी कृषकों को शिक्षित करना ही अपना उद्देश्य बनाता है। गाँवों में वह केवल कृषकों को शिक्षित करने के लिए ही गया है।[31]

वस्तुत: निराला अपनी जागरूक परस्पराओं और युग के ज्वलंत प्रश्नों तथा समस्याओं से पूर्ण सचेत हैं। मानवाधिकार की वृहद् व्याख्या उनके साहित्य में यत्र-तत्र सर्वत्र व्याप्त है। शिक्षा में भी समानता के पक्षधर, संस्कृति के पुजारी कवि निराला स्त्री-शिक्षा के विशेष पक्षधर हैं। क्योंकि नारी ही समाज का मेरुदण्ड है। कवि का मत है "जब तक स्त्रियों में नवीन जीवन की स्फूर्ति भर नहीं जाएगी, तब तक गुलामी का नाश हो ही नहीं सकता। यह एक समय था, जब ज्ञान का इतना प्रकाश फैला हुआ था कि बच्चों को पालने पर झुलाती हुई माता गाती थी। स्त्रियों का आदर-सम्मान जब तक नहीं होता तब तक देवता भी संतुष्ट नहीं होते।"[32]

पुरातन भारतीय संस्कृति के अनुरूप निराला नारी को परिवार तथा समाज में उच्च स्थान दिलाने के पक्षपाती हैं। साथ ही नारी स्वातन्त्र के पूर्ण समर्थक भी। वह एक तरफ नारी का कुशल गृहिणी होना स्वीकार करते हैं तथा नारी के संयमित् सौन्दर्य के प्रशंसक हैं तो दूसरी ओर नारी को उच्च शिक्षा दिलाने तथा पुरुष के कंधा से कंधा मिलाकर परिवार के सम्पूर्ण उत्तरदायित्व में समान भाग लेने की बात कहकर 'महिला मानवाधिकार' की संपुष्टि भी करते हैं।

मानवाधिकार, मानवीय गरिमा को बचाने, अक्षुण्ण बनाये रखने का बिन्दु है तथा 'देहो देवाल्यो नाम' को सिद्ध करने का मुद्दा है। मानवाधिकार का सम्बन्ध मानव के व्यक्तित्व एवं विकास से जुड़ा है। वास्तविकता तो यह है कि अधिकार व्यक्ति पर राज्य द्वारा किया गया कोई उपकार नही प्रत्युत् उसे जन्मना प्रकृति द्वारा प्राप्त है। मानवाधिकार की भावना मूलत: 'वसुधैव कुटुम्बकम्' पर आधारित है। निराला साहित्य भी 'आत्मवत्

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

सर्वभूतेषु वसुधैव कुटुम्बम्' पर आधृत है, जिसमें सहज ही मानवाधिकार की प्रतिष्ठा को सफल करने की दृष्टि समाहित है।

वास्तव में निराला जी एक ऐसी संस्कृति का निर्माण करना चाहते थे, जिसकी जड़ें विश्ववन्दित् प्राचीन भारतीय संस्कृति में हो और शाखा-प्रशाखायें उन्मुक्त रूप से सर्वत्र विकसित हों। वह स्वामी विवेकानन्द के स्वप्न को साकार बनाना चाहते थे। स्वामी जी ने भेद-भावों तथा तमाम संकीर्णताओं से परे एक शक्तिशाली राष्ट्र और आदर्श विश्व-परिवार की कल्पना की थी। महाप्राण ने स्वयं को इसी पथ का अनुयायी कहा है। अपनी इस समन्वय कारिणी संस्कृति को वह एक नये रूप में निखरी हुई देखना चाहते थे। इसीलिए वे वीणावादिनी से वर माँगते है।-

"काट अन्ध-उर के बन्धन-स्तर/बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर/जगमग जग कर दे।"[33]

उनका काव्य विश्वकल्याण की सतत् प्रवाहिनी धारा प्रवाहित करता है। भारतीय संस्कृति के जो भी उपेक्षणीय स्थल थे, उनका यथार्थ चित्रण करके उन्होंने मानवाधिकार की घोषण व सुरक्षा का सफल प्रयास किया है। उनका विश्वास था कि हमारा सांस्कृतिक विकास तब तक अपूर्ण रहेगा जब तक हम पददलितों को ऊपर उठाकर अपने में न मिला लें। उनका साहित्य मूलतः मानवीय भूमि पर प्रतिष्ठित है। सत्य, अहिंसा, करूणा, मैत्री और विश्व-बन्धुत्व के साथ ही मानवाधिकार का महामंत्र-समता- स्वतंत्रता-गरिमा तथा पाशविकता से मुक्ति का आह्वान निराला साहित्य की प्रमुख विशेषता है।

संदर्भः-

1- कारेल वसक, ह्यूमन राइट्स ए लीगल रियलिटी, दी इंटरनेशनल डायमेन्सन ऑफ ह्यूमन राइट्स खण्ड प्रथम, पृष्ठ 4-10।
2- यूनाइटेड किंगडम एंड ह्यूमन राइट्स, हैमालिन लैक्चर्स
3- कानन, गहराना, ह्यूमन राइट्स, ए कनसेपचुअल प्रोस्पेक्टिव, इण्डियन जनरल आफॅ इण्टरनेशनल लॉ, खण्ड 29, जुलाई-दिसम्बर1989, पृ. 367
4- अतर, चन्द्र, पालिटिक्स ऑफ ह्यूमन राइट्स एण्ड लिबर्टी- ए ग्लोबल सर्वे (1985) पृ. 45।
5- स्वा. भारत में मानवाधिकार-डॉ0 कृष्णमोहन माथुर पृ. 18, 19 ।
6- "मनुष्य का जन्म सब जन्म में श्रेष्ठ है।" भारत में विवेकानन्द, पृ. 35
7- अनामिका, निराला, भारतीय भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद तृतीय संस्करण संवत् 2015, पृ. 18
8- प्रबन्ध-प्रतिमा, 1963 ई0, पृ. 49
9- अनामिका, गंगा पुस्तकमाला कार्यान्वय, लखनऊ, 1972, पृ. 24
10- परिमल, गंगा पुस्तकमाला कार्यान्वय, लखनऊ, 1972, पृ. 8
11- अणिमा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971 ई0, पृ. 8
12- अनामिका, गंगा पुस्तकमाला कार्यान्वय, लखनऊ, 1972
पृ. 18-19
13- प्रबन्ध-प्रतिमा, पृ. 344-345
14- बेला, पृ. 81
15- प्रबन्ध-प्रतिमा, पृ. 123-124
16- प्रबन्ध-प्रतिमा, पृ. 77
17- कुल्लीभाट, गंगा पुस्तक माला, 1964, पृ. 36-37
18- राजनीति और समाज शीर्षक लेख, सुधा, अगस्त सन् 1933
19- नये पत्ते, लोक भारतीय प्रकाशन, 1973, पृ. 37
20- लिली, गंगा पुस्तक, संवत्, 2013, पृ. 14

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

निराला साहित्य में मानवाधिकार की संकल्पना

डॉ० मंजू मिश्रा
असि. प्रोफे., हिन्दी विभाग, महाराज बलवन्त सिंह पी.जी. कालेज, गंगापुर, वारणसी

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

21- निरूपमा, निराला, भारतीय भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद तृतीय संस्करण संवत् 2023, विक्रमी, पृ. 43
22- बिल्लेसुर बकरीहा, बिताब महल, इलाहाबाद, 1967 ई0, पृ. 28 द्वितीय संस्करण
23- अलका, गंगा पुस्तक, 1971 ई0, पृ. 97
24- परिमल, पृ. 110
25- शर्मा, राजकुमार: महाकवि निराला संस्मरण श्रद्धा जलिया , पृ. 31
26- अनामिका, पृ. 24
27- नये पत्ते, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973 ई0, पृ. 29-30, 63-64, 92-93, बेला, पृ. 62, अलका, पृ. 67, लिली, पृ. 64-65
28- प्रबन्ध-प्रतिमा, पृ. 90
29- तत्रैव, पृ. 131-132
30- अलका, पृ. 31
31- तत्रैव, पृ. 88
32- प्रबन्ध-प्रतिमा, पृ. 136
33- निराला रचनावली, भाग-1, पृ. 210

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN